Integral Research (Peer-reviewed, Open Access & Indexed Multidisciplinary Journal) ISSN: 3048-5991
Journal home page: https://integralresearch.in/, Vol. 02, No. 05, May. 2025

भक्ति रस और तत्वचिंतन का समन्वयः डॉ. कपिलदेव द्विवेदी की दृष्टि में

अमित कुमार घोड़ाइ *
शोधच्छात्र
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

Abstract

पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी द्वारा रचित भक्तिकुसुमाञ्जलिः एक ऐसा संस्कृत गीतिकाव्य है, जिसमें भक्ति, दर्शन और काव्य-सौंदर्य का अद्वितीय समन्वय दृष्टिगत होता है। इस काव्य में आत्मा और परमात्मा की मिलन की आध्यात्मिक अनुभुति को गहन दार्शनिक विमर्श के साथ अभिव्यक्त किया गया है। यह ग्रन्थ भारतीय चिंतन परंपरा की भक्ति-दर्शन धारा को न केवल पुष्ट करता है, अपितु उसे जीवंत रूप प्रदान करता है। भक्तिकुसुमाञ्जलिः न केवल भक्तिकाव्य परंपरा में विशिष्ट स्थान रखता है, बल्कि यह भारतीय दर्शन और संस्कृत साहित्य की दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण कृति है। इसमें भाव, भाषा, छंद और अलंकार का ऐसा उत्कृष्ट समन्वय प्राप्त होता है, जो इसे साहित्यिक दृष्टि से भी गौरवपूर्ण बनाता है। डॉ. द्विवेदी ने इसमें जो भावाभिव्याक्ति की है, वह न केवल भक्तिपरक है, बल्कि तत्वचिंतन से भी ओतप्रोत है। यह गीतिकाव्य भारतीय संस्कृति, धर्म और आध्यात्मिक चेतना का सशक्त प्रतिनिधि है, जो पाठक के अंतर्मन को प्रभावित कर आत्मविमर्श की प्ररणा देता है।

Keywords: गीतिकाव्य, भक्तिकाव्य, आत्मा, परमात्मा, भक्ति, दर्शन, तत्त्वचिंतन।

प्रस्तावनाः

भारतीय संस्कृति की आत्मा भक्ति एवं दर्शन- दोनों में समाहित है। जहाँ दर्शन जीवन के तात्त्विक सत्य की खोज करता है, वहीं भक्तिकाव्य आत्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक मिलन को भावात्मक अभिव्याक्ति प्रदान करता है। भारतीय मनीषीयों ने भक्ति और दर्शन को एक-दुसरे का पूरक माना है, तथा उनके समन्वय से ही भारतीय आध्यात्मिक परंपरा का सार साकार होता है। भक्तिकाव्य की परंपरा में यह समन्वय अत्यंत प्रभावशाली रूप में

* Corresponding Author: Amit Kumar Ghorai
Email: amitghorai778@gmail.com
Received 29 April. 2025; Accepted 19 May. 2025. Available online: 30 May. 2025.
Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)
This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License

प्रतिफलित होता है। इस परंपरा में आधुनिक संस्कृत साहित्य के प्रतिष्ठित विद्वान, वेदवेत्ता एवं दार्शनिक चिन्तक पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी का योगदान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। उनके द्वारा रचित भक्तिकुसुमाञ्जलिः एक अत्यंत महत्वपूर्ण संस्कृत गीतिकाव्य है, जिसमें भक्ति, काव्य-सौंदर्य और दार्शनिक गहराई का अद्भुत समन्वय दृष्टिगोचर होता है।

इस काव्य में भावनात्मक भक्ति और तात्विक दृष्टिकोण का ऐसा विलक्षण सामंजस्य विद्यमान है, जो भारतीय आध्यात्मिक चिंतन की परंपरा को न केवल पुष्ट करता है, अपितु उसे जीवंत भी करता है। भक्तिकुसुमाञ्जलिः केवल भक्तिकाव्य की परंपरा में विशिष्ट स्थान नहीं रखता, बल्कि यह संस्कृत काव्यशास्त्र तथा भारतीय दर्शन की दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान ग्रंथ है।

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी एक परिचयः

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी संस्कृत साहित्य, भारतीय दर्शन और वैदिक परंपरा के मूर्धन्य विद्वान, प्रतिष्ठित भाषाविज्ञानी तथा आचार्य हैं। डॉ. द्विवेदी का जन्म 6 दिसम्बर 1918 को उत्तरप्रदेश के एक विद्वत् ब्राह्मण परिवार में हुआ था। प्रारम्भ से ही उन्हें वैदिक साहित्य,संस्कृत व्याकरण, भारतीय दर्शन में गहन रूचि थी। उन्होंने अनेक संस्कृत ग्रन्थ का सम्पादन, भाष्य, अनुवाद एवं रचना की है। सन् 1991 में भारत सरकार द्वारा उनकी संस्कृत साहित्य और शिक्षा में योगदान के लिए उन्हें पद्मश्री सम्मान से सम्मानित किया गया है। उन्होनें अपनी सम्पूर्ण जीवन में 70 से अधिक पुस्तक लिखि है। उनकी रचनाओं में दर्शन, भाषाविज्ञान, काव्यशास्त्र और वेदों पर आधारित गूढ़ चिन्तन प्रस्तुत होता है। उनकी कुछ प्रमुख रचनाएँ है- भक्तिकुसुमांजलि, आत्मविज्ञानम्, राष्ट्रीयगीतांजलिः,

वेदान्तचिन्तनम्, संस्कृतरत्नावली, रचनानुवादकौमुदी, भाषाविज्ञानम्, वेदों में विज्ञान आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

भक्तिकुसुमाञ्जलि ग्रन्थ का स्वरूपः

भक्तिकुसुमाञ्जलिः डॉ. कपिलदेव द्विवेदी द्वारा रचित एक अनूठा संस्कृत गीतिकाव्य है, जो भक्ति साहित्य की एक नवीन विधा प्रस्तुत करता है । यह ग्रंथ भक्ति से ओतप्रोत सौंदर्यपूर्ण गीतों का संग्रह है, जिसमें कुल 100 सरल, सरस और प्रांजल भाषा में रचित श्लोक संकलित हैं। इन श्लोकों की रचना वेद, उपनिषद तथा भगवद्गीता जैसे प्राचीन ग्रंथों में निहित आदर्श सुभाषितों के आलोक में की गई है। इस काव्य में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, रुद्र, गणेश, सरस्वती आदि देवताओं का गुण एवं कर्म के आधार पर विविधभावों से स्तुति गान किया गया है। श्लोकों में भक्ति के विभिन्न भावों– शृंगार, वात्सल्य, सख्य तथा दास्य- की सजीव और सशक्त अभिव्याक्त देखने को मिलती है।

भक्तिकुसुमाञ्जलिः केवल भक्ति की भावना तक सीमित नहीं है, अपितु यह ग्रंथ आध्यात्मिक, दार्शनिक, शास्त्रीय तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टियों से भी अत्यंत समृद्ध है। प्रत्येक श्लोक में जँहा एक ओर भक्ति का रस प्रवाहित होता है, वहीं दुसरी ओर उनमें गूढ़ दार्शनिक तत्व भी अंतर्निहित हैं, जो इस काव्य को विशेष महत्व प्रदान करते हैं।

भक्ति का स्वरूपः

भक्ति शब्द संस्कृत **भज्** धातु से निष्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ है- सेवा, प्रेम, सम्मान, अर्पण या समर्पण। भक्ति केवल भाव या भावना नहीं है, यह आत्मा और परमात्मा के मध्य तात्विक संबंध का अनुभव है। सामान्य अर्थ में भक्ति ईश्वर के प्रति प्रेमपूर्ण समर्पण-

सा तस्मिन् परमप्रेमरूपा।[i]

परानुरक्तिरीश्वरे भक्तिः।[ii]

डॉ. द्विवेदी भक्ति के विषय में कुछ नया तत्व प्रस्तुत किए है- केवल मात्र इन्द्रिय विषयों के भोग से वैराग्य, संसार से वैराग्य का त्याग, एकान्त का आश्रय या भगवान् के नाम स्मरण मात्र ही भक्ति नहीं है। भक्ति दिव्यआत्मशक्ति है, वह सद्भावना को प्रकट करती है, बुरे गुणों को दूर करके सद्गुणों को प्रकट करती है, मन को प्रसन्न करती है, दिव्य भावनाओं को उत्पन्न करती है और आनन्द और मुक्ति प्राप्त करती है।

दार्शनिक तत्व

भक्तिकुसमाञ्जलिः काव्य में उपनिषद्, गीता, वेद, पुराणों में वर्णित आत्मा, ब्रह्म, जीव और ईश्वर के संबंध, मुक्तिपथ तथा भक्ति के तात्त्विक पक्ष जैसी दर्शन की गुढ़ अवधारणाएँ अत्यंत व्यवस्थित रूप से अभिव्यक्त हुई हैं। आत्मचिंतन की आधारशिला ऋग्वैदिक '**प्रज्ञानं ब्रह्म**'[iii], यजुर्वेद के '**अहं ब्रह्मास्मि**'[iv], सामवेद के '**तत्वमसि**'[v] तथा अथर्ववेद के '**अयमात्मा ब्रह्म**'[vi]- इन चार महावाक्य पर ही स्थापित है। इन्हीं वैदिक सिद्धांतों को आधार बनाकर **भक्तिकुसुमांजलि** के अनेक गीतों में आत्मा के स्वरूप का सुंदर व सुगठित वर्णन किया गया है। **एतदात्म्यमिदं सर्वं** नामक गीत में आत्मा का स्वरुप निरुपित किया गया है-

आत्मा तथैव लीनः परमाणुषूतमेषु ।

ज्ञेयोऽस्ति विज्ञवर्यैः हृत्-पद्म-संस्थितोऽयम्।।[vii]

सहस्रशीर्षा पुरुषः नामक गीत में भगवान् के स्वरुप के स्वरूप का अत्यंत व्यापक और दार्शनिक वर्णन किया गया। इसमें ईश्वर को वुद्धि के प्रेरक, ज्ञान और विज्ञान के आधार, जीवों और पक्षियों की रचयिता, विराट् विष्णुरूप तथा वेदों के प्रणेता के रुप में प्रकटित किया गया है। यह गीत ईश्वर की सर्वव्यापकता, सर्वज्ञानता और सृजनात्मकता शक्ति को सूक्ष्म एवं विस्तृत रूप में अभिव्याक्त करता है।

त्वमेवासि स्रष्टा जगत-स्थावराणां, नृणां प्राणिनां पक्षिणां भुचराणाम्।

विराड् विष्णुरूपः श्रुतीनां प्रणेता, धियः प्ररको ज्ञान-विज्ञान-वेत्ता।।[viii]

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या उक्त वचनानुसार संसार की मिथ्यात्व और ब्रह्म की कर्तृत्व सत्ता सिद्ध होती है। डॉ. द्विवेदी ने **भक्तिकुसुमाञ्जलिः** काव्य में **सर्वं खलिदं ब्रह्म** नामक गीत के माध्यम से इस भाव को अत्यंत स्पष्ट रूप में व्यक्त किया है। इस गीत के माध्यम से ईश्वर को इस प्रकार चित्रत किया गया है- जो इस पृथिवी पर व्यापक हैं, आकाश में सूर्य किरण के भाँति शुशोभित है, शांति रूपी अमृतरस से पूर्ण हैं, चन्द्रमा और पवित्र निर्झरिणी के समान मनोहर तथा सतत गतिशील हैं- एसे ब्रह्मरुप आपको प्रणाम है।

जगदीतल इह कृतसुनिवेशं, व्योम्नि दिवाकर-दीधिति-रम्यम्।

शान्ति-सुधा-रसरुचिर-सुधांशु, पावन-निर्झर-मञ्जुप्रवाहम्।।[ix]

अद्वैत वेदान्त दर्शन में जगत् को परमात्मा का विवर्त वाताया है। वेदान्तसार में सदानन्द योगी ने इस विवर्त सिद्धांत की परिभाषित करते हुए कहा है-

सतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विकार इत्युदीरितिः।

अतत्त्वतोऽन्यथा प्रथा विवर्त इत्युदाहृतः।।[x]

अर्थात्- जो वस्तु वास्तव में है, उसमें वास्तविक परिवर्तन को विकार कहा जाता है, जबकि जो वस्तु जैसी नहीं है, वैसी प्रतीत हो, उसे विवर्त कहा गया है। जैसे- रस्सी को सर्प समझ लेना, वह वास्तव में सर्प नहीं है, बल्कि रस्सी ही है। इसी प्रकार ब्रह्मरूप वस्तु का विवर्त यह संसार मात्र प्रतीति (भ्रम) है, वह वास्तव में सत्य नहीं है। केवल ब्रह्म ही सत्य है, जैसे रस्सी ही वस्तुतः है, सर्प नहीं।

इस पूर्वोक्त विवर्त भाव को डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने भक्तिकुसुमञ्जलिः काव्य में निम्न श्लोक के माध्यम से अभिव्यक्त किया है-

अयं लोकः स्थितो ह्यस्मिन्, समष्टीभूय संघातः, स ओतः प्रोतरूपश्च, त्रिलेके सत्वसंश्लिष्टः।।[xi]

ऋतस्यायं स्वयं तन्तुः, तता सूत्रात्मिका सृष्टिः, सुसूत्रस्यास्ति तत् सूत्रम्, अवैति ब्रह्मविद् विद्वान्।।[xii]

कठोपनिषद् मे उल्लिखित '**आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव च**' इस रथरुपक वाक्य को डॉ. कपिलदेव ने भक्तिकुसुमाञ्जलिः में इस उपनिषद् दृष्टान्त को भक्ति के संदर्भ में विश्लेषित करते हुए आत्मा और ईश्वर के संबंध को भावात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है।

आत्मरूपाऽवबोधः प्रियश्चेद् भवेद्, देहमेतद् रथविद्धि भोगात्मकम्।

वुद्धिमेतां प्रियां सारथिं भावय, प्रग्रह मानसं विद्धि चिन्तापरम्।।[xiii]

अर्थात्, यदि आत्मा का सच्चा बोध और ईश्वर से प्रेम हो, तो यह शरीर भोगों के लिए बना रथ है, बुद्धि उसकी प्रिय सारथी है, और मन ही लागाम है जो चिंताओं से युक्त रहता है।

इसी प्रकार मुण्डकोपनिषद् के **प्रणवो धनुः शरो ह्यात्मा** वाक्य के द्वारा जीवात्मा को परमलक्ष की और संकेत करते हुए डॉ. कपिलदेव द्विवेदी कहते है कि- संसार में ब्रह्म ही परम लक्ष्य है, और जीवन का उद्देश्य उसी की प्राप्ति है। ओम् (प्रणव) उस लक्ष्य को भेदने हेतु धनुष है, और जीवात्मा उस धनुष से चला गया वाण है। मुक्ति, सुख और शान्ति के लिए एकाग्र चित्त होकर भक्ति से ब्रह्मरुप लक्ष को पुरी शक्ति से वेधन करना चाहिए। ब्रह्म तेजस्वी, प्रकाशमय और शक्तिरूप है। वह चर अचर संसार में व्याप्त है। वह ब्रह्म निष्काम भाव से प्राप्त होता है, जबकि सकाम भाव से उसकी प्राप्ति अत्यंत कठिन है। जिस व्यक्ति की कामनाएँ तृप्त हो चुकी हैं, वही सच्चा ब्रह्मवेत्ता और मुक्त जीव होता है। इस भाव को द्विवेदी जी निम्नश्लोक में स्पष्ट किया है-

निष्काम-भाव-प्राप्यं, कामेन दुर्लभं तत्।
यो ह्यस्ति तृप्तकामः, स ब्रह्मविद् विमुक्तः।।[xiv]

ओम् खं ब्रह्म नामक गीत में डॉ. द्विवेदी ने देवादिदेव ब्रह्म को सृष्टि का नियामक तत्व स्वीकार किया है। उन्होंने ब्रह्म को आकाशवत् व्यापक तथा समस्त भौतिक सीमाओं से परे बताया है। यह विचार छान्दग्योपनिषद् तथा बृहदारण्यक उपनिषद् के उस सिद्धांत की पुष्टि करता है, जिसमे कहा गया है- **आकाशो वै नाम ब्रह्म**[xv] अर्थात- ब्रह्म ही आकाश है, वही वह तत्त्व है जो सब कुछ धारण करता है और जिसमें सब कुछ स्थित है। इस व्यापकता को डॉ. द्विवेदी ने एक श्लोक में इस प्रकार अभिव्यक्त किया-

लोके न किंचिदीदृग्, व्याप्तं न यत् त्वयैवम्।
त्वं प्राणरूप! स्वामिन्!, व्याप्त चराचरेऽस्मिन्।। [xvi]

डॉ. कपिल देव द्विवेदी ने भक्तिकुसुमाञ्जलिः के भक्तिगीतों में ईश्वर को परमात्मा के नाम से सम्बोधित किया है। उन्होंने परमात्मा को सर्वत्र व्याप्त, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ बताया

गया है। परमात्मा को संसार का कर्ता (सृजनकर्ता), नियंता (नियम स्थापित करने वाला)तथा पालक (पालन करने वाला) कहा गया है। वह तीनों लोकों में व्याप्त है और प्रत्येक अणु में समाया हुआ है-

स ईशो विश्वसंस्रष्टा, निदेष्टा पालकः शश्वत्।
त्रिलोकं व्याप्य संकीष्टः, अणु प्रत्येकमाप्तोऽयम्।।[xvii]

इस प्रकार भक्तिकुसुमाञ्जलिः काव्य डॉ. द्विवेदी ने दर्शन के सभी प्रमुख पक्षों का सूक्ष्म और गुढ़ विश्लेषण किया है। विशेषतः उन्होंने वैदिक साहित्य, उपनिषद और गीता के महावाक्यों को अपने गीतों के माध्यम से भावपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया है, जिससे उनकी रचनाएँ केवल भक्तिकाव्य नहीं, बल्कि दार्शनिक चिन्तन का उत्कृष्ट उदाहरण बन जाती हैं।

भक्ति और दर्शन का समन्वयः

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी कृत **भक्तिकुसुमाञ्जलिः** भारतीय साहित्य में भक्ति और दर्शन के अद्वितीय समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण है। इस काव्य में लेखक ने भक्ति-रस से ओत-प्रोत होकर गूढ़ दार्शनिक भावों की अभिव्याक्ति की है, जिससे यह रचना न केवल भावनात्मक स्तर पर प्रभावशाली बनती है, बल्कि बौद्धिक एवं आत्मिक धरातल पर भी गहन प्रभाव उत्पन्न करती है।

भक्तिकुसुमाञ्जलिः में डॉ. द्विवेदी ने वेद, उपनिषद, गीता तथा भक्ति परंपरा की जटिल दार्शनिक अवधारणओं को सरल, सरस एवं बोधगम्य शैली में प्रस्तुत किया है। वे ईश्वर को सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी एवं करुणामय मानते हैं, और जीवात्मा के साथ उसके संबंध को अद्वैत वेदान्त के दृष्टिकोण से व्याख्यायित करते हैं। इस काव्य में भक्ति और दर्शन का

जो समन्वय प्रस्तुत हुआ है, वह निम्नलिखित बिंदुओं के माध्यम से विशेष रूप से स्पष्ट होता हैः

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी कृत भक्तिकुसुमांजलिः में भक्ति और दर्शन का ऐसा विश्लेषण समन्वय देखने को मिलता है, जो भारतीय दार्शनिक परंपराओं की आत्मा को भक्ति का भावधारा में लय कर देता है। यह समन्वय निम्न बिन्दुओं से विशेष रूप से स्पष्ट होता है-

1. **ईश्वर का स्वरूप** – डॉ. द्विवेदी ने अपने काव्य में ईश्वर को न केवल उपास्य रूप में चित्रित किया है, बल्कि उसे ब्रह्म रूप में स्वीकार करते हुए अद्वैत वेदान्त की भावना से एकात्म किया है।
2. **आत्मा और ब्रह्म की एकताः**

   भक्तिकुसुमांजलिः में उपनिषदों की भांति आत्मा ओर ब्रह्म की एकता को स्पष्ट किया गया है। कवि आत्मा को ब्रह्म का अंश मात्र नहीं बल्कि उसी का पूर्ण रूप मानते है- **अहं ब्रह्मास्मि** की भावना उनके काव्य में व्याप्त है। आत्मा की दिव्यता उनकी ब्रह्म स्वरूपता, और उसकी परम सत्ता से अभिन्नता को काव्यात्मक सौंदर्य के साथ प्रस्तुति किया गया है।

3. **भक्ति और मोक्ष का साधनः**

   गीता के सिद्धांतों की भाँति डॉ. द्विवेदी ने भक्ति को मोक्ष का प्रमुख साधन स्वीकार किया है। उनके अनुसार भक्ति केवल एक भावनात्मक अनुभूति न होकर एक दार्शनिक साधन है, जो ज्ञान और कर्म के साथ मिलकर मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करती है।

4. **प्रपत्ति मार्ग की प्रधानताः**

   श्रीवैष्णव परम्परा में वर्णित प्रपत्ति मार्ग- अर्थात् ईश्वर के समक्ष पूर्ण समर्पण – को डॉ. द्विवेदी ने मुक्ति का सर्वोत्तम मार्ग माना है। भक्तिकुसुमाञ्जलिः में यह भाव बार-बार प्रकट होता है कि जब जीव अपने अहं को त्यागकर ईश्वर की शरण में आता है, तभी वह वास्तविक मुक्ति का अधिकारी बनता है।

5. **साकार निराकार ईश्वर का संगमः**

   डॉ. द्विवेदी का भक्ति साकार और निराकार दोनों रूपों को स्वीकार करती है। कहीं वे श्रीकृष्ण या शिव की मूर्ति की भाव-पूर्ण स्तुति करते है, तो कहीं ब्रह्म के निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापक रूप का ध्यान करते हैं। इस द्वैत-अद्वैत का अद्भुत समन्वय उनके काव्य की विशेषता है।

काव्यगत विशोषताएः

- भाषा संस्कृत की उच्चकोटि है, परंतु सहज एवं बोधगम्य।
- परंपरागत गीति-छन्द के साथ साथ कतिपय नवीन छन्दों का प्रयोग है।
- श्लोकों में भाव और तात्त्विकता दोनों का समुचित संतुलन है।
- शैली वर्णात्मक, भावप्रधान तथा आत्मिक संवाद शैली में है।

निष्कर्षः

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी कृत भक्तिकुसुमाञ्जलिः भारतीय भक्तिकाव्य परंपरा में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। इस ग्रन्थ में भक्ति की भावनात्मक गहराई, दर्शन की तात्त्विक सूक्षता तथा भाषा की काव्यमय अभिव्यक्ति- इन तीनों का अद्वितीय समन्वय

विद्यमान है। भक्तिकुसुमाञ्जलिः न केवल भक्तजनों के लिए उपयोगी है, अपितु यह दार्शनिकों, साहित्यकारों और साधकों के लिए भी समान रूप से प्रेरणास्त्रोत है। इसमें भक्ति और दर्शन का ऐसा संगम उपस्थित हुआ है, जो आध्यात्मिक चेतना की उस उच्च अवस्था को प्रकट करता हैं। यह कृति भारतीय आध्यात्मिक और काव्य परंपरा की गरिमा को नवीन आलोक प्रदान करती है।

---

[i] नारद भक्तिसुत्र 2

[ii] शाण्डिल्य भक्तिसुत्र 1

[iii] उपनिषद् संचयनम्, शुकरहस्योपनिषत्, 32, पृ. 258

[iv] उपनिषद् संचयनम्, शुकरहस्योपनिषत् 33,34, पृ, 258

[v] उपनिषद् संचयनम्, शुकरहस्योपनिषत् 35,36 पृ. 258

[vi] उपनिषद् संचयनम्, शुकरहस्योपनिषत् 37,38 पृ. 259

[vii] भक्तिकुसुमाञ्जलि 8.4

[viii] भक्तिकुसुमाञ्जलि 2.5

[ix] भक्तिकुसमाञ्जलि 7.1

[x] वेदान्तसार सदानन्दविरचित, आद्यप्रसादकृतहिन्दीटीकासंवलित,पृ.सं.96

[xi] भक्तिकुसुमाञ्जलि 3.6

[xii] भक्तिकुसुमाञ्जलि 3.7

[xiii] भक्तिकुसुमाञ्जलि 57.3 पृ.सं.84

[xiv] भक्तिकुसुमाञ्जलि 16.4

[xv] छान्दग्योपनिषद 1.9.1

[xvi] भक्तिकुसुमाञ्जलि 6.6

[xvii] भक्तिकुसुमाञ्जलि 1.1

संदर्भ ग्रन्थसूचीः

1. भक्तिकुसुमञ्जलि, डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्, ज्ञानपुर (वाराणसी), 1988
2. श्रीमद्भगवद्गीता- स्वामी रामसुखदास- गीता प्रेस, गोरखपुर, सम्वत् 2048
3. उपनिषद् संग्रह (श्वेताश्वतर, मुण्डक, कठ)
4. नारद भक्ति सूत्र, डॉ. नीलेश जोशी. ई-बुक पवलिकेशन प्राइबेट लिमिटेड, 2018
5. शाण्डिल्य भक्तिसूत्र, श्री योगेश्वर, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2010
6. यजुर्वेद संहिता, पं. ईश्वरचन्द्र, परिमल पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2019

7. एकादशोपनिषत्संग्रह, स्वामी सत्यानन्द, षष्ठावृत्ति, संवत्- 2015
8. भक्तियोग, स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती, सत्साहित्य प्रकाशन ट्रस्ट, (पञ्चमः), 2000
9. उपनिषद् संचयनम्, आचार्य केशवलाल वि. शास्त्री,(पार्ट-2), चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, दिल्ली, 2015
10. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, पद्मश्री डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करणः 2000ई.